मनुष्य बनो

वा० २०.

सम्बर
१९८९

शरणागति.

शुभ संकल्प.

क्षमा.

प्रेम.

निष्काम कर्म.

ब्रह्मचर्य पालन.

'मनुष्य बनो' के नियम

१—शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिकता के नियमों का वास्तविक दृष्टिकोण से प्रचार करना और प्रेम, सभ्यता, आदर, शिष्टाचार, सदाचार सहनशीलता और संयम की शिक्षा देना इसका मुख्य उद्देश्य है मनुष्य बनना और बनाना।

२—सन्त महात्माओं और ऋषियों की वाणी को सरल, सुबोध और साधारण भाषा में प्रचार करना।

३—सामाजिक उन्नति कारक तथा देशहित कारक लेखों को भी स्थान दिया जायेगा।

४—किसी धर्म पन्थ या सम्प्रदाय के खण्डन सम्बन्धी लेख नहीं छापे जायेंगे।

५—यह पत्र प्रत्येक मास की १५ तारीख को प्रकाशित हुआ करेगा।

६—लेखों के घटाने बढ़ाने और छापने न छापने का अधिकार सम्पादक को होगा। लेख सम्पादक के नाम भेजे जांय।

७—ग्राहकों को पत्र लिखते समय ग्राहक नम्बर व पता साफ-साफ अवश्य लिखना चाहिए। उत्तर के लिये जवाबीकार्ड आना चाहिए वी० पी०पी० से पत्रिका नहीं भेजी जायेगी। इसका वार्षिक मूल्य २०.०० है।

८—यदि किसी मास का पत्र ठीक समय पर न पहुंचे तो पहले अपने यहाँ डाकखाने से पूछताछ करके वहां से जो उत्तर न मिले व अगला अंक निकलने के एक सप्ताह पूर्व तक कार्यालय में पहुंचने पर ही दूसरी प्रति बिना मूल्य भेजी जा सकेगी।

९—प्रबन्ध सम्बन्धी पत्र, ग्राहक होने की सूचना, मनीआर्डर आदि मैनेजर के नाम से भेजनी चाहिए। मनीआर्डर कूपन पर अपना पता साफ-साफ लिखना चाहिए। और पते की तबदीली भी।

—प्रकाशक

R. S.

ओ३म पूर्णमद पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमदुच्यते
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णं मेवावशिष्यते ॥

मनुष्य बनो

वर्ष ३८	दिसम्बर १९८९	अङ्क २

१ शब्द

(रचियता–स्व० हजूर दीवान चन्द्र जी आहूजा)

मन अशान्त हो जब भाई, भजन गुरू के गाया कर।
चार दिनों का जीवन है यह इस मन को समझाया कर॥
चिन्ता से क्या होता है, किसकी चिन्ता कैसी चिन्ता ?
चिन्ता को कर गुरू हवाले, गुरू का शुक्र मनाया कर।
हल-चल मन में जब हो जावे, गुरू का ध्यान लगाया कर॥
कर्त्ता-धर्त्ता जान के उसको, मन को धीर बंधाया कर।
सुरत चढ़ा कर ऊपर अपनी, आसन खूब जमाया कर॥
सुरत भुलाकर इस तन की, मन गुरु चरणन में लाया कर।
नाम के सुमिरन में सुख मिलता, नामी याद कराया कर॥
इस जग के सब झूठे रिश्ते, सच्चे मन्दिर जाया कर।
अपना आपा भूल भाई, प्रेम की नार हिलाया कर॥
जो कुछ होगा, भाग्य से होगा, ऐसा चक्र चलाया कर।
दुःख का दारू गुरु मन्तर, जपवा कर, जपिवाया कर।
छोड़ गुरु पर सब कुछ अपना, 'गाफिल' सुख को पाया कर॥

गतांक पृष्ठ ३६ से आगे

नाम तप है। उस आदमी से कहा कि प्रातःकाल ठीक ५ बजे मेरे मकान पर मत्था टेक जाया करो। २१ दिन करो काम बन जायेगा। देखना नागा न हो। वह बराबर ५ बजे आता और मत्था टेक कर चला जाता। उसका काम हो गया। मैंने उसकी इच्छा शक्ति को दृढ़ करने को हिकमत से काम लिया।

दूसरी बात सुनो। एक स्त्री मेरे पास आई कहने लगी सन्तान नहीं है। मैंने महा अपने मालिक को साथ लाओ। वह सत्संगी भी है। वे दोनों मेरे पास आये। मैंने उस स्त्री से भी कहा कि ६ माह तक नमक छोड़ दे। यदि ६ महीने नहीं तो ३ महीने अवश्य छोड़ो। लड़का हो जायेगा। अगर नहीं छोड़ सकती तो तो चले जाओ। सोचा कि अगर ये स्त्री तप कर जायेगी तो उसके प्रभाव से लड़का हो जायेगा। ऐसा क्यों कसा ? क्योंकि स्त्रियों को जुवान का चस्का होता है। जो उसे मिला उसके तप का फल मिला।

मैं आप लोगों को खजाना देकर जाना चाहता हूँ ताकि आत्म ज्ञान के लिये किसी और की खोज न करना पड़े। मैं क्यों कह रहा हूँ क्योंकि मेरी ड्यूटी है। मेरे वश की बात नहीं है।

रंरकार की ध्वनि

मैंने पहले कहा कि ररंकार का शब्द क्यों होता है। सुनो जब तुम्हारी वृत्ति अपने प्रीतम के लगन के प्रभाव से खिची और उसने मूतिबनाई तो तुम्हारे मन का अनेकवाद छूटा। जब और अधिक खिची और ध्याता ध्येय भी छूट गये तब एकता

आ गई। मन की तरंगें खिचकर एक जगह चली गई। जो मन के ख्यालात थे वह छूट गये। मन के तार खिच गये। उस समय जो धुनि पैदा होती हैं उसका नाम है ररंकार। इस सारंगी को सुनने को कहाँ फिरते हो? जब वृत्ति खिच जायेगी ये शब्द होने लगेगा। उस रूप के साथ लगाने की अन्दर में कोशिश करो। जिसे बाहर के प्रेम की आदत नही वह अन्तर का प्रेम भी नहीं कर सकता। ये न समझना कि बाहर की गुरुभक्ति का खण्डन कर रहा हूँ। गुरू दरवार में जाते हो। तुम्हारा ध्यान रूप की ओर नहीं जमता। तरह-२ के ख्याल उठाते रहते हो। फिर कैसे आशा करते हो कि अन्तर में सारंगी बजेगी जब तक कि बाहर की वृत्तियों को खींचा नहीं जायेगा इसलिये सन्त मत में पहली श्रणी के सत्संगियों को ये नियम है कि बाहर में गुरू के साथ प्रेम करो। उसकी शक्ल देखते रहो। इससेतुम्हारा मन बहकेगा नहीं। न इधर जायेगा न उधर। लगन एक जगह लगी रहेगी। तुम्हारी सुन्न पहले बाहर लगेगी। जब बाहर लगेगी तव अन्तर में सुगमता से लग जायेगी। यह मन्दिर तथा मूर्तियाँ जो बनाये गये थे किसी उद्देश्य से बनाये गये थे वह यही मन्तव्य था कि यदि जीवों का मन अन्तमुखी न हो तो बाहर में तो लगे। यद्यपि मेरा मन्दिर अन्दर बना है, मगर मैं जब मन्दिर में जाता हूँ तो मत्था टेकता हूँ। दाता का रूप मानकर उससे प्रेम करता हूं कोई ये न समझे कि मैं मन्दिर मसजिद अथवा गुरुद्वारे का विरोधी हूँ। मन की शिक्षा का यह श्रीगणेश है। यदि बच्चे को पहाड़ न पढ़ाओगे तो अर्थमैटिक कैसे निकाल लेगा। अतः प्रारम्भ में गुरू से बाहर में प्रेम करना चाहिए। गुरु भक्ति या गुरु का प्रेम आवश्यक है मगर गुरू से प्रेम नहीं कर सकते

वह कठिन है। पत्थर की मूर्ति से सब प्रेम करते हैं। आदमियों से प्रेम कठिन है। गुरू के प्रेम से रोटी, कपड़ा पैसा परमार्थ दोनों मिल जाते है। मोती की कदर तो जौहरी जानता है। जहां जौहरी नहीं उसको मोती पत्थर का एक टुकड़ा मात्र है।

क्षर, अक्षर, निःक्षर

पारब्रह्म महासुन्न मंझारा, सोई निःअक्षर रहाया है।

क्षर, अक्षर, निःक्षर क्या है ? वह जो मैंने समझा है वह कहता हूँ।

क्षर स्थूल

अक्षर—सूक्ष्म

निःअक्षर—कारण

हमारा मन जब अकेला होता है। तब उसमें संकल्प नहीं उठते। वह निःअक्षर है। जब संकल्प उठें तब अक्षर और जब संकल्प का रूप बन जाता है वह क्षर है। स्वामी जी ने कहा है :

क्षर अक्षर. निःक्षर पारा। विनती करे वहां दास तुम्हारा ।।

मैंने इनको यह समझा है। स्वामी जी का क्या भाव था मुझे नहीं मालूम। देखो प्रेम में तुम्हारे विचार समाप्त हो रूप सामने आ गया। अपने को भूल गये खुद फरामोशी (अपने को भूल जाना) ही महासुन्न का स्थान है, मगर मन वहाँ हैं इसलिये निक्षर है। यह प्रेम का मार्ग है। इसके साधन से थोड़े समय में अनुभव हो जायेगा। दाता दयाल महर्षि शिव एक पुस्तक में लिखते हैं कि यह ६ माह का कोर्स है। मैं यहाँ तक कहता हूँ कि यह ६ दिन या ६ घड़ी का कोर्स है मगर ये केवल उनको है जो चेतवान होकर (शेष पेज ३३ पर)

मासिक सन्देश

(परम सन्त हुजूर मानव दयाल
डा० ईश्वर चन्द्र शर्मा जी महाराज)

मेरी अपनी ही आत्मा के अंश

मेरे प्रियतम सत्संगियों !

राधास्वामी,

परम दयाल जी सहाई ।

पिछले मासिक सन्देश में मैंने आपको सत्संग दौरे के सम्बन्ध में २४ जुलाई, १९८९ सायंकाल तक की सूचना दी थी । उसी दिन मुझे ७ बजे हवाई जहाज से जयपुर से बम्बई जाना था । जब हम हवाई अड्डे पहुंचे तो हमें पता चला कि हमारी उड़ान ३ घण्टे देरी से जाने वाली थी । उसका कारण यह था कि जिस उड़ान को रोजाना की भाँति बम्बई से न्यू देहली पहुंचकर सायंकाल जयपुर के रास्ते से बम्बई जाना था, वह उड़ान बम्बई में मौसम की सख्त खराबी के कारण चली ही नहीं थी । ऐसी परिस्थिति में देहली से एक नई उड़ान

जयपुर के रास्ते से तीन घण्टे देरी से चलाई गयी। भारतीय वायु सेना ने जयपुर के हवाई अड्डे पर यह घोषित कर दिया कि बम्बई की यह उड़ान मौसम की खराबी के कारण ही अहमदाबाद में रोक दी जायेगी।

उन सभी लोगों ने, जो मेरे साथ हवाई अड्डे पर आये थे अनुरोध किया कि मैं बम्बई जाना स्थगित कर दूं किन्तु मेरा मन नहीं चाहा। मैं बम्बई के सत्संगियों की आशाओं पर पानी नहीं फेरना चाहता था। मैंने ये बेहतर समझा कि अहमदाबाद जाना ठीक रहेगा, क्योंकि मुझे आशा थी कि वहाँ पहुंचकर हमारी उड़ान को बम्बई जाने का अवसर दे दिया जायेगा। जयपुर और अहमदाबाद के बीच उड़ान के कर्मचारियों को तनिक मात्र भी विश्वास नहीं था कि हमारी उड़ान अहमदाबाद से बम्बई जायेगी।

हमारा हवाई जहाज अहमदावाद हवाई अड्डे पर सुरक्षित उतरा। यहाँ पर हमें तीन घण्टे तक अनिश्चितता की दशा में इन्तजार करना पड़ा। बम्बई से बार-बार सन्देश आ रहे थे कि मौसम की हालत अत्यन्त खराब है और बम्बई भारी वर्षा और तूफान के कारण विश्व से कट गया। इसके बावजूद भी मैंने उड़ान की अतिथिसत्कार करने वाली महिला से कहा कि हमारी उड़ान अवश्य बम्बई जायेगी। मेरे इस कथन के कुछ ही मिनटों बाद हमारी उड़ान के चालक को आज्ञा मिल गई कि हम बम्बई जा सकते हैं।

हमारा वायुयान बम्बई के लिये बनाना हो गया। यद्यपि हमें हवाई अड्डे पर उतरने के लिये आधे घण्टे तक आकाश में ही रहना पड़ा। और हम बम्बई के चारों ओर चक्कर लगाते रहे, तथापि अन्त में हम हवाई अड्डे के भीगे हुए और बाद में

आये हुए मैदान पर सुरक्षित उतर गये। मैंने आपको यह घटना इसलिये नहीं बतायी कि मेरी विचार शक्ति के कारण यह अभूतपूर्व चमत्कारी अनुभव हुआ। वास्तव में बम्बई के सत्संगियों के प्रेम और उनकी तड़प के कारण प्रकृति को ऐसी परिस्थितियाँ पैदा करनी पड़ी कि हमारी उड़ान बम्बई पहुंच गयी। मेरे प्यारे सत्संगियो ! तुम्हारे प्रेम और तुम्हारे अगाध विश्वास के कारण मुझे मजबूर होकर सत्संग देने के लिये आना ही पड़ता हैं यदि अनिवार्य परिस्थितियों के कारण मैं आप तक नहीं पहुंच सकता, उसमें भी भविष्य के लिये भलाई ही होती है। १९८५ में मुझे सख्त बीमारी के कारण और भयानक फ्लू के कारण यू० पी० का दौरा रद्द करना पड़ा। आचार्य के० पी० वर्मा, आचार्य शब्दानन्द, आचार्य के० एम० श्रीवास्तव और कृष्ण मोहन तिवारी ने यह निश्चय किया कि मुझे किसी एकान्त स्थान पर इलाज और विश्राम के लिए जाना चाहिए।

इसलिये मैं हवाई जहाज से देहली होता हुआ जयपुर पहुंचा। जयपुर से हवाई अड्डे पर मुझे इतनी कमजोरी महसूस हुई कि मैं वायुयान की सीढ़ियों से भी नहीं उतर सकता था। मेरे प्यारे श्री अर्जुनलाल छापरवाल अपनी गाड़ी लेकर हवाई अड्डे पर पहुंच गये और मुझे बहुत आराम से अपने घर ले गये। दूसरे दिन मेरा बहुत ही प्यारा बेटा सुमेर सिंह अजमेर से अपनी गाड़ी लेकर आया और मुझे विश्राम के लिये अपने घर फकीर भवन अजमेर में ले गया। उसने और उसके परिवार ने बहुत सेवा की। और मेरे आदेश के मुताबिक किसी भी सत्संगी को मेरे अजमेर आने की सूचना नहीं दी, क्योंकि उन्हें मालूम था कि मैं केवल विश्राम के लिये वहाँ

गया था। डा० राजेश गुप्ता ने अवश्य मेरी लगातार परिचर्या की। कमजोरी तो बहुत कम हो गयी थी किन्तु फ्लू का प्रभाव और बुखार लगातार चल रहा था। दूसरे दिन प्रातःकाल मुझे श्री सुमेरसिंह ने कहा महाराज जी! मैंने आपके आने की सूचना किसी को नहीं दी, किन्तु मैं आपको एक आवश्यक सूचना देना चाहता हूँ वह ये हैं कि गार्गीया की पत्नी श्रीमती गार्गीया जी को सख्त हार्ट अटैक हो गया है और वह अस्पताल में बेहोशी की अवस्था में विशेष परिचर्या कक्ष में हैं।

मुझे ये सुनकर श्रीमती गार्गीया के प्रति दया की अनुभूति हुई। हालांकि मैंने स्वयं सुमेर सिंह का कहा था कि मैं किसी सत्संगी को नहीं मिलूंगा और न सत्संग दूंगा। किन्तु श्रीमती सावित्री गार्गीया की बीमारी को सुनकर मुझसे रहा नहीं गया। जैसे कि मैंने कई बार आपको बताया हैं कि सच्चे और निस्वार्थ प्रेम में कोई नियम नहीं होता। मैं तुरन्त सुमेर सिंह की कार में बैठकर अस्पताल पहुंचा श्रीमती सावित्री गार्गीया बहुत नाजुक दशा में पलंग पर लेटी हुई थीं। ज्यों ही मैं उन के निकट पहुंचा उन्होंने आँखें खोल दी और गद्गद् होकर आँखों से अश्रु बहाकर कहने लगीं, महाराज! आपने बड़ी दया की। मैं कल से ही आपको याद कर रही थी और महसूस कर रही थी कि आप मेरे पास हैं। मुझे अभी भी विश्वास नहीं हो रहा कि क्या मैं स्वप्न देख रही हूँ या आप सचमुच प्रकट हो गये हैं? मैंने उनके सिर पर हाथ फेरा और उनको आश्वासन दिया कि वे अच्छी हो जायेंगी। मालिक की मौज से वे अच्छी हो गयीं और दूसरे दिन घर चली गयीं।

मैं आपको अतीत की घटना इसलिये सुना रहा हूँ कि आप अपने प्रेम विश्वास और ताकत की भावना को पहचानें। आप

हमेशा दाता दयाल जी के नीचे दिये गये शब्द न भूलें-

'तू दयाल है दया मूरत, तेरी दया का दान मिले।
भक्ति मिले शुभ शक्ति संत संगम में गुरु ज्ञान मिले ॥

इस शब्द में सद्गुरू को पूर्ण मानते हुए उससे ये प्रार्थना की गयी है कि हम उसकी दया के पात्र हैं। दर्द दिल से जब उसकी दया की मांग की जाती है तो प्रकृति में ऐसी परिस्थितियाँ पैदा हो जाती हैं कि हमारी मांग की पूर्ति अवश्य हो जाती है जब भक्ति अगाध हो जाती है तो शुभ शक्ति कल्याणकारी हो जाती है और अनेक प्रकार के चमत्कारी अनुभव होने लगते हैं। मुझे तनिक मात्र भी श्रीमती सावित्री गार्गीया की बीमारी का ज्ञान नहीं था और न मैंने उन दिनों में राजस्थान जाने का विचार तक किया था। श्रीमती गार्गीया कई दिनों से बीमार चल रही थीं। सम्भवतया उनकी दिली पुकार ने आचार्य के० पी० वर्मा, आचार्य शब्दानन्द, आचार्य कृष्ण मोहन श्रीवास्तव और आचार्य कृष्ण मोहन तिवारी को प्रेरणा दी कि वह मुझे उत्तर प्रदेश के दौरे को स्थगित करके अजमेर जाने की प्रेरणा दें। विचार शक्ति के सम्बन्ध में और सच्चे दिल से मालिक से अपनी माँग की पूर्ति के सम्बन्ध में पुकार करने से और उसकी पूर्ति होने का एक और उदाहरण मेरे १९८५ में अजमेर जाने की घटना से जुड़ा हुआ है। उन दिनों राजस्थान विधान सभा के चुनाव हो रहे थे। उस चुनाव में मेरी प्रिय शिष्या डा० गिरजा व्यास उदयपुर क्षेत्र से चुनाव लड़ रही थीं। मेरा राजनीति से कोइ सम्बन्ध नहीं हैं। किन्तु राष्ट्र की भलाइ और देश की उन्नति के लिये सदैव सद्भावना इसलिये रहती है क्योंकि भारत मेरी जन्म भूमि है। स्वामी

रामतीर्थ ने कहा था कि वो सन्त- सन्त नहीं है जो अपनी मातृ भूमि से प्यार नहीं करता। दूसरे शब्दों में एक सच्चा सन्त और एक सच्चा साधक पूर्ण रूप से देश भक्त होता है।

परम दयाल जी महाराज ने मानव को मानव बनने की प्रेरणा देते हुए एक सत्संग में कहा है कि प्रत्येक सच्चा आदर्श मानव, सच्चा सन्त और सच्चा साधक देशभक्त इसलिये होना चाहिये कि जिस देश की मिट्टी से उसका शरीर बना है, उसे उसी देश से सच्चा प्रेम करना चाहिये।

मैंने पहले भी कहा है कि परमदयाल जी के सत्संगों की महान सेवा के कार्य भार को संभालने से पहले मैं समाज सेवा और देशभक्ति में रूचि रखता था। मैंने बाल्यकाल से स्वतन्त्रता संग्राम में भाग लिया था। सन् १९४२ में महात्मा गाँधी द्वारा दिये गये अंग्रेजों को सम्बोधित करते हुए 'भारत छोड़ो' (Quite India) आन्दोलन में मैंने सक्रिय भाग लिया था। मैं उस समय २१ वर्ष की आयु में मुल्तान शहर में (Indian girls College) भारतीय महिला महाविद्यालय का आचार्य था। उस महाविद्यालय में हिन्दु, मुसलमान इसाइ सिक्ख और हर धर्म की लड़कियां तालीम पा रही थीं। मैंने न ही केवल स्वयं 'भारत छोड़ो' आन्दोलन में भाग लिया बल्कि चार सौ छात्राओं का भी जुलूस निकालकर इस महान आन्दोलन में भाग लेने को प्रेरित किया था। भारत में प्रत्येक भाग में यह आन्दोलन उग्र रूप से चला था। इस आन्दोलन ने ऐसा उग्र रूप धारण कर लिया कि वहां पर नौजवानों ने हुकूमत चला दी। सिन्ध में भी ये आन्दोलन आग की तरह फैल गया था : अंग्रेजी हुकूमत में जगह-२ पर लाठियों और

गोलियों का प्रयोग करके इस आन्दोलन को दबाने की कोशिश की थी जिसके फलस्वरूप सैकड़ों देशवासियों को मौत के घाट उतारा गया और हजारों को जेल में बन्द कर दिया गया। २ अगस्त १९४२ को ही महात्मा गाँधी, जवाहरलाल नेहरू, बल्लभभाई पटेल, मौलाना आजाद और सभी नेताओं को नजरबन्द कर दिया गया था। यह लार्ड वेवल का जमाना था जो उस समय भारत का वायसराय था। यह वायसराय कड़-पन के लिये विख्यात था। हमारे मुल्तान शहर में भी कांग्रेस के नेताओं को जेल में बन्द कर दिया गया। मुझे गिरफ्तार न करने का कारण यह था कि मेरे पिताजी इस आन्दोलन के विरोधी थे और बरतानिया सरकार में वायसराय और बर-तानियाँ के सम्राट जार्ज के समय तक उनकी अंग्रेजी कवि-ताओं का आदर करते थे और उन्हें राजकवि की पदवी दे रखी थी।

इन्हीं कारणों से हालांकि सी० आइ० डी० पुलिस मेरे पीछे रहती थी, मुझे कभी गिरफ्तार नहीं किया गया। मैं अपने पिताजी से राजनीति के सम्बन्ध में सहमत नहीं था वह अपने आपको राजभक्त कहते थे और कांग्रेस पार्टी को पसन्द नहीं करते थे। उनका कहना था कि जब कभी भारत स्वतन्त्र हुआ और सफेद टोपी वालों के हाथ राज आया तो देश में अनुशासन नहीं रहेगा। उनका विचार था कि जब तक भारत में शिक्षा नहीं फैलती और जब तक हर एक प्रौढ़ व्यक्ति पढ़ा नहीं होता तब तक स्वतन्त्रता को बनाये रखना कठिन है। मेरा यह विचार था कि भारत को स्वतन्त्र अवश्य होना चाहिये ताकि भविष्य में हम अहिंसा और सत्य पर चलते हुए हर नागरिक को आदर्श और देशभक्त बना सकें। जब भारत

का बंटवारा हुआ और हमें लंगड़ी आजादी मिली तो मुझे एक शरणार्थी के रूप में राजस्थान में स्थापित होना पड़ा। जब मैं राजस्थान में प्रोफेसर के पद पर नियुक्ति हो कर पं० जवाहर लाल नेहरू को मिलने के लिये उनके निवास स्थान पर गया तो उन्होंने मुझे कहा 'डा० शर्मा तुमने मुल्तान में स्वतन्त्रता आन्दालन में भाग लिया था और मुझे १९४७ में में स्वतन्त्रता से पहले भी मिले थे। मैं चाहता हूँ कि तुम्हारे जैसे स्वतन्त्रता संग्राम में भाग लेने वाले योग्य व्यक्ति देश की आजाद हकूमत में शामिल हों। तुम राजस्थान में राजनीति में भाग लो और निर्वाचन में लोकसभा या विधान सभा में चुनाव लड़कर आ लाओ।' मैं उनके आश्रय को जानता था क्योंकि उन्होंने श्री रामनिवास मिर्धा जैसे योग्य व्यक्ति को राजस्थान की राजनीति में प्रविष्ट कराकर राजस्थान पर उपकार किया था। किन्तु मेरा रूझान राजनीति में नहीं था। मैं तो स्व० महात्मा गाँधी जी के उस विचार से सहमत था कि काँग्रेस पार्टी ने देश को आजादी दिलाकर अपना मकसद पूरा कर लिया है। अब उसे राजनीति छोड़कर सामाजिक और साँस्कृतिक क्षेत्रों में देश की सेवा करनी चाहिये। इसलिये मैंने पं० जवाहर लाल नेहरू के कथन का उत्तर देते हुए कहा था Pandit ji, I want to Serve My Contry Culturally and Eductionally, throulgh teaching and writing in India and abrocad।" अर्थात मैं देश की सांस्कृतिक और शिक्षा सम्बद्ध सेवा भारत में और विदेश में लिखने और पढ़ाने के द्वारा राष्ट्र की सेवा करना चाहता हूँ।" श्री जवाहरलाल नेहरू यह सुनकर बहुत प्रसन्न हुए और मेरी पीठ ठोकते हुए कहा—'डा० वर्मा! मैं तुम्हारी देशभक्ति से

बहुत प्रसन्न हूं।" यह सन् १८५८ की बात है। इसके बाद मैं पढ़ाने का काम करता रहा। और अमेरिका में भी १७ वर्ष तक भारतीय दर्शन और धर्म पढ़ाता रहा। इसी दौरान में बल्कि १८६३ में ही मैं अपने परम गुरू परमदयाल जी महाराज की शरण में आ गया। इस पृष्ठभूमि के कारण मैं यह चाहता था यद्यपि राजनीति सेवी हो चुका हूँ तथापि योग्य व्यक्तियों को उसमें भाग लेकर सुधार करना चाहिये।

इन्हीं कारणों से मैंने निर्वाचन से एक दिन पहले श्री सुमेर सिंह के घर से डा० कुमारी गिरजा व्यास को आशीर्वाद देने के लिये टेलीफोन किया। उसने बहुत नम्रता से कहा 'गुरुजी, मुझे आपके आशीर्वाद की सख्त जरूरत है, क्योंकि मुकाबला बहुत कड़ा है। जातिवाद, अंध विश्वास और हमारी पार्टी ईर्ष्यां मेरे रास्ते में भारी रुकावटें हैं। संक्षेप में मैंने डा० गिरजा व्यास को दिल से आशीर्वाद दिया "तुम निश्चित रूप से कल निर्वाचित हो जाओगी।" मालिक की मौज से ऐसा ही हुआ। आज डा० गिरजा व्यास राजस्थान सरकार में वित राज्य मन्त्री के पद पर नियुक्त हैं। सन्तोष की बात यह है कि वह बहुत ही सच्चाई से काम कर रही हैं। उनके प्रति कोई भी शिकायत नहीं है। कारण यह है कि वह किसी प्रकार की रिश्वत नहीं लेतीं और सात्विक जीवन बिता रही हैं। मैं समझता हूँ कि मेरा अजमेर में उन दिनों अचानक आना एक ऐसा चमत्कार था जो यह प्रमाणित करता है कि विचार मैं बहुत शक्ति है।

मैं आपको दौरे के सम्बन्ध में यह बता रहा था कि रात्रि को १२ बजे हमारा हवाई जहाज सुरक्षापूर्वक बम्बई के हवाइ अड्डे पर उतरा। जब मैं हवाइ जहाज से उतरकर सामान

के कक्ष में पहुँचा तो मैं यह देखकर हैरान पह गया कि बम्बइ का कोइ भी सत्संगी मेरे स्वागत के लिये मौजूद नहीं था। उसका कारण यह था कि टेलीविजन पर यह सूचना दे दी गयी थी कि मौसम की खराबी के कारण कोई भी उड़ान बम्बई में नहीं उतर रही थी ।

जब मैं सामान कक्ष में अपना सूटकेस उठा रहा था तो मेरा प्यारा ओमी (निजामाबाद वाना ओमप्रकाश तिवारी) वहां पहुच गया। उसने मेरे हाथ से सूटकेस छीन लिया। उसने मुझे बताया कि सभी सत्संगी हवाइ अड्डे से होकर लौट गये थे किन्तु ओमी को दृढ़ विश्वास था कि मेरा वायुयान अवश्य उतरेगा। ओमी के टेलीफोन करने पर मेरा परम प्रिय रसूल आजाद तुरन्त अपनी कार लेकर आ गया और हमें बांद्रा में ओमी के घर ले गया। मुझ रात्रि ओमी के घर पर बितानी पड़ी क्योंकि उसकी योग्या माता सरला तिवारी और उसके पितामह उसी इन्तजार में बैठे थे कि मैं उनके घर आऊँगा। २५ और २६ जुलाई के दौरान में मैंने आचार्या निर्मला पंडित द्वारा आयोजित सत्संग दिए। और एक रात्रि को श्रीमती सरला भान के भी घर रहा। जैसे कि मैंने पहले बताया है कि भारी तूफान और वारिश के कारण बम्बई का सारा इलाका दुनियाँ से कट गया था। इसलिये २५ और २६ की सभी उड़ानें स्थगित कर दी गयी थीं। किन्तु मेरा २७ जुलाई प्रातःकाल ३ बजे ऐयर इंडिया से देहली का रिजर्वेशन था। सौभाग्यवश वह पहली उड़ान थी, जो बम्बई से निकली।

यह सब कुछ मौज के आधीन था कि आँधी तूफान के बावजूद भी मुझे कहीं भी न रुकना पड़ा। २७ जुलाई प्रातः-काल मैं न्यू देहली हवाई अड्डे पर पहुंच गया। भाग्यमाता जी

पहले ही जयपुर से देहली आ चुकी थीं। हमारे मैटाडोर के चालक श्री हरवंशराय शर्मा अपनी ड्यूटी पर मौजूद थे। मुझे यहाँ पर आपको यह सूचित करते हुये हर्ष होता है कि हरवंश व्यवसाय से ड्राइवर नहीं हैं। वह बिलारी के सम्पन्न ब्राह्मण हैं। उन्होंने जगह-२ पर सत्संग के लिये मुझे ले जाने के लिए भगवान कृष्ण वाला सारथी का काम संभाला है। वह हमें सीधा आचार्य के० पी० वर्मा के घर पर ले गये। दिन भर सत्संगियों का तांता बंधा रहा। उसी रात्रि को बल्कि २८ जुलाई प्रातःकाल ३ बजकर १५ मिनट पर मैं भाग्यमाता जी और आचार्य के० पी० वर्मा गल्फ ऐयर लायन्स की उड़ान के द्वारा न्यू देहली से लन्दन के लिये रवाना हो गये और उसी दिन प्रातःकाल हीथरो हवाई अड्डे पर पहुंच गये।

श्री किशोर गुप्ता और श्री प्रकाश चन्द्र चौहान अपने सुपुत्र के सहित हवाई अड्डे पर मौजूद थे। हम श्री किशोर गुप्ता के साथ बर्मिघम के लिये रवाना हो गये क्योंकि श्री प्रकाश चन्द्र चौहान ने बर्मिघम आने का निश्चय कर लिया था। कुछ दिनों बाद अमेरिका जाते समय मैं श्री चौहान के घर भी गया। और मुझे ये जानकर प्रसन्नता हुई कि उनके परिवार के सभी सदस्य सत्संगी हैं और श्रद्धा, आस्था और प्रम रखते हैं मैंने एक पिछले मासिक सन्देश में बताया था कि श्री प्रकाश चन्द्र चौहान एक विशेष व्यक्ति हैं, जो आध्यात्मिक दृष्टि से जिज्ञासु और शरणागत हैं। उनका प्रेम अगाध है। मैं उनका आदर करता हूँ। उनकी प्रबल इच्छा और आर्थिक अनुदान के कारण मानव धाम पर अप्रैल के महीने में अनामी शिव मन्दिर जिसमें परम सन्त परमदयाल पंडित फकीरचन्द्र जी महाराज की मूर्ति भी विराजमान होगी, बन-

वाया जायेगा और शान्ति सत्संग और गायत्री का अजपाजाप विश्व शान्ति के लिये आयोजित किया जायेगा। इस उत्सव की ठीक तिथि से आप सबको समय पर सूचित किया जायेगा ताकि सत्संगी इस शुभ अवसर पर सम्मिलित हो सकें।

इस बार इंग्लैंड में मेरा ठहरना काफी लम्बा था। जगह-जगह पर सत्संगों का आयोजन किया गया था, जिसमें सबसे पहला सत्संग गीता मन्दिर में हुआ।

इसके अलावा सर्व श्री किशोर गुप्ता, मिलकीत सिंह, बक्शी सिंह, जगदीश गुप्ता के घर भी सत्संग आयोजित किये गये। इस बार मेरा मान चैस्टर में भी आध्यात्मिकता की दृष्टि से विशेष दौरा हुआ। डा० और श्रीमती खुराना ने अपने घर पर दो साधना शिविर शुरू किये। पहला शिविर भारतीय इंग्लैंड निवासियों के लिये और दूसरा शिविर मुख्य-तथा अंग्रेजों के लिए आयोजित हुआ। बर्मिघम से श्री किशोर गुप्ता और कुछ दूसरे सत्संगियों ने भी दूसरे साधना शिविर में भाग लिया। इन दोनों अवसरों पर मैंने पहले यह बतलाया कि सन्तुलित जीवन व्यतीत करने के लिये समाधि का क्या महत्व है। और बाद में उन्होंने सुरत शब्द योग के अभ्यास करने की विधि बतायी। अन्त में सभी सम्मिलित होने वाले सत्संगियों ने सुमिरण ध्यान और भजन में बैठकर शान्ति का अनुभव किया।

हमेशा की भाँति अमेरिका जाने से एक दिन पहले मैं लंदन रहा, जहाँ पर एक सत्संग तनजानियाँ के दिलजीत पंडित के सुपुत्र सजीव पंडित के घर आयोजित हुआ। और दूसरा सत्संग सैला के श्री गुरुमीत सिंह की सुपुत्री के घर पर

हंसलों में आयोजित हुआ। गुरुमीत सिंह हमारे स्व० ट्रस्टी पूरन चन्द्र के सुपुत्र हैं। हंस लोक के सत्संग पर सत्संगियों की संख्या बहुत अधिक थी। इस सत्संग के बाद हम रात्रि के विश्राम के लिए श्री वर्मा और उनकी पत्नी श्रीमती शशी वर्मा के घर पर गए। यह दोनों पति-पत्नी सत्संगी हैं और रूहानियत का रूझान रखते।

हम १४ अगस्त प्रातःकाल हीथ्ररो ऐयरपोर्ट से टी. डबलू. ए. की उड़ान के द्वारा रवाना होकर उसी दिन करीब ११ बजे प्रातःकाल न्यूयार्क पहुंच गए। इस बार श्री जौन कर्टन उनकी योग्या पत्नी सूजन कर्टन और उनका प्यारा सुपुत्र मंगलमय न्यूयार्क के हवाई अड्डे पर हमें लेने आये थे। हम टी. डबलू. ए. के विशेष टर्मिनल पर पहुंचे थे। क्योंकि श्री कर्टन पहले कभी भी न्यूयार्क हवाई अड्डे पर नहीं आए थे। इसलिए हमें ढूंढने में उन्हें कुछ समय लगा।

इस विदेशी सत्संग दौरे के सम्बन्ध में इस मासिक सन्देश में इतनी ही सूचना दी जा सकती है। अगले सन्देश में संभवतया मैं सन्त मत दृष्टि से कर्म की व्याख्या जारी रखूंगा।

मैं आप सबको इस महीने की सद्भावना देता हूँ और सच्चे दिल से आशीर्वाद देता हूँ कि आप सब फले फूलें और आपका लोक और परलोक बन जाए।

सबको
राधास्वामी !

आपका फकीरमय
मानव

—:o:—

ग्यारहवाँ वचन

एक और अनेक

एक में अनेक है और अनेक में एक है। काल में माया है माया में काल है। पुरुष में प्रकृति है। प्रकृति में पुरुष है। जात में सिफ्त है और सिफ्त में जात है और इन्हीं द्वन्द्वों के समूह का नाम दुनियाँ है। दुनियाँ और कुछ नहीं है। केवल द्वन्द्व (दो पने) का स्थान है और जहाँ दो रहेंगे वहाँ हर समय खट पट होती रहेगी और अन्धकार उनसे खेल किया करता रहेगा यह प्रकृति का नियम है। लाख तुम एकता और संयुक्त होने का वर्णन करते रहो मगर सच्चाई को, जो द्वन्द्व की सचाई है, उस मेंट कैसे सकते हो। यहाँ तर्क-वितर्क अथवा विद्वता के खेल और दार्शनिक वाद-विवाद से काम नहीं चलता बात बनाना और वस्तु है और असलियत को प्राप्त करना और वस्तु है। अद्वैतवादियों के वचनों को कोई कब तक सुनता रहे। अद्वैतवादियों की तर्क वितर्क में कब तक मन लगाये रहे अन्त में इनकी सीमा भी तो होनी चाहिए या यह मूल्यवान जीवन व्यर्थ की उधेड़- बुन में खोया जायेगा। अगर कुछ है तो उसका सुख भी तो उठाओ और फिर सुख-दुःख दोनों का ठाट हमेशा के लिये उतार कर रख दो।

राधास्वामी मत इन आपेक्षिक झगड़ों में नहीं पड़ता। वह माया को अनहुई या मिथ्या नहीं बताता। जीवन के मण्डल में वह एक वस्तु है। अपनी सत्ता रखती है, मगर हाँ उसकी सत्ता किसी और सत्ता के आधीन है।

सत्संग के प्रारम्भ में केवल इतना समझने और समझाने की जरूरत है। जैसे-जैसे मन का घाट बदलता जायेगा, उसको

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

स्वयं भेद आप ही समझ में आ जायेगा और जब यह सीढ़ियाँ तय हो जायेंगी, तर्क-वितक की आवश्यकता ही न रहेगी। यह उसकी तालीम का उद्देश्य है।

यदि तुम यों ही एक अनेक के मण्डल में पड़े रहोगे तो इससे तुम्हारे हाथ क्या आयेगा ?

"दुविधा में दोनों गये, माया मिली न राम।"

"गये दोनों जहां के काम से हम, न इधर के हुये न उधर के हुये।"

एक निर्धन को शादी की चिन्ता हुई। निर्धन की शादी कौन करता है। आखिर लोगों ने उसे धनवान मशहूर किया कुछ दिनों तो लोग विश्वास करते रहे। शादी के सम्बन्ध में पत्र व्यवहार होता रहा। अन्त में एक दिन भांड़ा फूट गया। और वह क्वारे का क्वारा बना रहा। यह दुविधा वालों की दशा होती हैं।

बूढ़ा बैल न आप लदता है, न दूसरे को लदने देता है। दुनियाँ के मत-मतान्तरों के अनुयायी न स्वयं ही सार भेद की ओर रूझान करते है न औरों को उसकी ओर रूझान करने देते हैं।

घर--घर देखा एक ही लेखा।
साधू सब का किया परेखा ॥
इस संसार का यही विशेखा।
भूले पंडित भूले शेखा ॥

ईश्वर एक ही है। बहुत अच्छा साहब ! फिर क्या हुआ ? उससे मन लगाओ। मगर मन कैसे लगे दुनियां तो मरी नहीं, चले ईश्वर की ओर और दुनियाँ ने आकर पल्ला पकड़ा।

मुझे कैसे छोड़ेगा। मैं तो तुझे कल न लेने दूंगी और वह बेचारा न इधर का हुआ न उधर का।

जीवन दुखदाई हो गया। सन्त मत कहता है मियां! किस झगड़े में तुम पड़ गये। एक अनेक के बखेड़े में जान खपाने लगे कौन कहता है कि दुनियाँ को छोड़ो। दुनियां में रहकर परमार्थ की कमाई भी सहज मार्ग से क्यों नहीं करते। थोड़ी देर का सत्संग करो। सुरत यब्द के अभ्यास में लगो। मन का कोठा तो बदल दो। स्वयं ही असलियत की समझ आ जायेगी और जो एक अनेक में पड़ रहे तो तुम जानो तुम्हारा काम जाने। इससे अधिक क्या कहा जाय।

सच्ची बात तो यह है कि असलियत एक है न दो है। वह जो है वह है। दुनियाँ के बाग में आकर यदि फल खाना है तो फल खाओ और यदि पेड़ पत्ते गिनना है तो गिना करो। इस में मर खपोगे और करते-करते कुछ न बनेगा।

एक कहूँ तो है नहीं, दूजा कहूँ तो गार।
जैसा है तैसा रहे, कहें कबीर विचार॥

—:o:—

बारहवाँ वचन

सिद्धान्त और असिद्धान्त

जो न एक है और न अनेक है, जो ऐक और अनेक दोनों हैं और जिसके विषय में मनुष्य के स्पष्ट शब्दों में किसी बात का अन्तिम निर्णय नहीं दिया जा सकता, वही आदर्श इष्ट और असलियत है। जिसे कहने वाला कह नहीं सकता, सुनने वाला सुन नहीं सकता और पहचानने वाला पहचान नहीं सकता, वह आश्चर्य का विषय है।

कहने वाले कहते हैं कि वह कहने की बात नहीं है, मगर ऐक भी आदमी ऐसा दिखायी नहीं देता जो उसकी बाबत कुछ न कुछ कहता न हो। आश्चर्य में आये हुये लोग अपने दिल के भावों को उस तक पहुंचाने के लिये विवश करते हैं, मगर चुप रहने के अतिरिक्त उनको कोई उपाय नहीं सूझता। कहते हुये मौन और मौन रहते हुये उसके गुणों का वर्णन करते रहते हैं विश्वास और अविश्वास और उसके मानने या न मानने की शक्तियां भी बेवसी में रहती हैं।

एक कहता है वह क्या है ? दूसरा कहता है वह क्या नहीं है ? तुम्ही बताओ कि यह आश्चर्य की बातें हैं या नहीं ? हम को तो इससे अधिक आश्चर्यजनक और कोई बात समझ में नहीं आती।

हैरत[1] ! हैरत !! हैरत !!! होई।
हैरत !!!! रूप धेरा पुनि सोई ।।

उसी का चारों ओर कथन है और उसी की ओर से निश्चिन्तता और मौनता है। उसी की सबको इच्छा है और उसी की ओर से सबको बेपरवाई है।

अन्त में वह क्या है ? जिसने जाना उसका जानना भी न जानने के बराबर है। जिसने नहीं जाना उसका न जानना भी जानना है। आस्तिक और नास्तिक दोनों ही उस जगह ऐक जैसी हैसियत रखते हैं।

ऋषि मुनि सबसे पहले उसकी ओर आकर्षित हुये। ऋषियों ने कहा कि वही सब कुछ है और उसी से सब कुछ है मुनि बोले कि कुछ कहा नहीं जाता और वह मौन रहे। यही कारण है कि ऋषियों को देखने वाला (दृष्टा) माना जाता है और मुनियों को मौन साधन करने वाला कहा जाता है। इस

१ आश्चर्य

तरह दो मत दुनियाँ में पैदा हो गये।

एक ने जो मार्ग पकड़ा वह एति मार्ग कहलाया। दूसरे ने जो मार्ग पकड़ा उसका नाम नेत मार्ग हुआ। ऐति का मतलब है कि वह यह है नेति से अभिप्राय है कि वह ये नहीं है यही वास्तव में पहले आस्तिक और नास्तिक हुये। लेकिन मजे की बात यह है कि न आस्तिक आस्तिकता की सीमा पर पहुचे और न नास्तिक नास्तिकता की सीमा तक पहुचे। जहां बुद्धि कुंठित हो जाती हैं वहाँ कौन जा सकता है? दोनों ही को अपने काम में परिश्रम करते रहने के अतिरिक्त अन्य उपाय दिखायी नहीं दिया। लेकिन वह अपने प्राकृतिक भावों को क्या करते। वह सबको अपनी ओर खींचता रहता है। चैन नहीं लेने देता। दिल की कुरेद को कोई क्या करे ऋषि ध्यानी हो गये और उसके ध्यान में मन्त्रों के रूप में स्तुति के गाने गाने लगे जो वेदों में भरे पड़े हैं। मुनि ज्ञानी हो गय और बुद्धि की काट-छाँट से काम लेने लगे जिसकी व्यबस्था उपनिषदों में हुई है। यह दुनियां के प्रारम्भिक पन्थों की दो किस्में हैं।

ऋषियों ने कर्म काण्ड क नियमों की नींव डाली और कर्म के सिलसिले में उसक हाथ आने का यत्न निकालना चाहा। मगर क्या वह हाथ आया? वह तो हाथ नहीं आया मगर चूंकि सिफाती विचारों से इनको क्या सम्बन्ध था, दिव्य शक्ति वाले देवता बुलाये जाने और आवाहन किये जाने पर आ मौजूद हुये। इनमें सिद्धि और शक्ति आती गयी और वह लोगों में मानवीय समझे जाने लगे।

मुनियों ने ज्ञान काँड की नींव डाली और ज्ञान ही को उसकी प्राप्ति का साधन माना। कर्म काण्ड इनकी दृष्टि में बेअसर और तुच्छ माना गया। चूंकि यह ज त (सार तत्व)

के विचारों की ओर आकर्षित हुये थे. उनको किसी अंश तक शान्ति का आनन्द मिलने लगा और वह भी लोगों में माननीय और पूजनीय हो गये।

यह इन दोनों मार्गों का परिणाम हुआ। यह 'एतिमार्ग' और 'नेतिमार्ग' का संक्षिप्त इतिहास है। एतिमार्ग वाले कहते है कि जो कुछ है वही है और नेतिमार्ग वाले कहते हैं कि वह इनमें से कोई भी नहीं है। प्रारम्भ में तो दोनों समुदायों की दशा किसी अंश तक संतोषप्रद थी मगर इसके पश्चात जैसे जैसे अमल करनेवालों की कमी होती गई,उनका स्थान विद्वान लेते गये परस्पर वाद-विवाद का क्षेत्र विस्तृत होता गया।

एतिमार्ग वालों ने अपने सिद्धान्त गढ़ने और सिद्धान्तों को समझा देने का प्रबन्ध किया। नेतिमार्ग वालों ने इन सिद्धाँतों को अशक्त और व्यर्थ पा करके बुद्धि को काट-छाँट में लगाया।

यह कर्म और ज्ञान की हैसियत हुई और बहुत समय तक यही दशा रही।

इसके सिलसिले में तीसरा समुदाय दुनियाँ में उत्पन्न हुआ जिसने कर्म और ज्ञान दोनों को अपर्याप्त समझकर उपासना काण्ड का महत्व जताया और एक सर्वप्रिय मार्ग निकाला जिससे बहुत लोगों को कुछ सन्तोष मिला।

धर्म के तीन मार्ग हैं जो विशेष रूप से हिन्दुओं में अब तक रुचिकर और प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देते हैं। पहिले उपासना काण्ड नहीं था। केवल ज्ञान और कर्म थे। यह बाद के समय का आविष्कार है।

उपासना शब्द दो संस्कृत शब्दों से मिलकर बना है उप (निकट और आसन (बैठक) से। निकट बैठने अर्थात संगीत का नाम उपासना है। इससे अधिक हैसियत उसकी प्रारम्भ में नहीं थी। शिष्य ऋषियों के पास बैठकर प्रश्नोत्तर किया

करते थे। यही उपासना थी जैसा कि प्रश्नोपनिषद आदि के अध्ययन से समझ में आता है।

यह उपासना ही आगे चलकर भक्ति मार्ग में बदल गई और उसमें ध्यान के अध्यास को और बढ़ा दिया गया

लेकिन इस उपासना ने बढ़ते-बढ़ते ऐसी उन्नति की कि उसमें हजारों ही प्रकार की समुदाये हो गयीं जिनमें पूजा पाठ रस्म-रिवाज कथा वार्ता, संयम-नियम, आचार और विचार आदि हैं। जैसा कि हम आजकल के गैष्णवों में देखते हैं। यह भी सार तत्व से वंचित होते गये और बिल्कुल ही बहिर्मुखी बन गये। बहिर्मुखी होने से इतने सिद्धान्त बना लिये कि मनुष्य उन्हीं के झमेले में पड़ा हुआ अपनी आयु नष्ट कर देता है और लोक परल क दोनों को खो बैठता है।

सन्तों ने उपासना मार्ग स्वीकार किया। न सिद्धान्त बद्ध बने न असिद्धान्त बद्ध हुये, बल्कि बीच का रास्ता स्वीकार किया जो दोनों के बीचो-बीच चलता है। इसी कारण से उसे सुषम्ना मार्ग का नाम दिया गया है। यह इंगला और पिंगला के बीच में है।

सिद्धान्त बद्ध को अंग्रेजी भाषा में डागमेटिक Dogmatic कहते है और सिद्धान्त अबद्ध को मिस्टिक Mystic का नाम दिया जाता है।

स्पष्ट शब्दों में सन्त मत डागमैटिक और मिस्टिक दोनों ही है। जहाँ तक मानवीय आचार, सामाजिक शिष्टाचार और धार्मिक सिद्धान्त का सम्बन्ध है वह डागमैटिक अर्थात् सिद्धाँतों की पाबन्दी करने वाला है। जहाँ रूहानियत (अध्यात्म प्राप्त का अभिप्राय है वहां वह चालू सिद्धान्तों का पाबंद नहीं है।

इस बात का समझना सरल नहीं है। इसके बिना समझे

हुए सन्त मत का महत्व भी समझ में नहीं आता।

सन्त मत के तीन स्तम्भ अर्थात् सत्गुरु, सत्संग और सत्-नाम हैं। लेकिन जिस समय आन्तरिक दृश्यों और आन्तरिक अनुभव का विषय आता है वहां उसे स्वतन्त्रता है। इन दो पंक्तियों को ध्यानपूर्वक समझ लो। तब तुम समझ सकोगे कि सन्त मत क्या है। यदि इसको नहीं समझा तो तुम भी अन्य समुदाय वालों की तरह पक्षपाती संकीर्ण हृदय और कट्टर हो जाओगे और सन्त मत तुम्हारे गले की जंजीर बनकर बन्धन में फंसा लेगा और तमाम परिश्रम व्यर्थ हो जायेगा। यह बीच का मार्ग है। बन्धन में निर्बन्धन और निर्बन्धन में बन्धन। यह इसका गुण है। इसकी विशेषता को जाने हुये असली ध्येय हाथ नहीं आता। गुरु नानक साहब की वाणी है :—

जब लग देखो न अपने नैना।
तब लग मानो न गुरु के बैना॥

—:o:—

तेरहवां वचन

विचार और भावों की शुद्धि

राधास्वामी मत कहता है कि विचार भ्रम और विश्वास को स्पष्ट रूप से जानना संत मत में प्रवेश होने की पहली शर्त है वास्तविक रूप से इस प्रसंग को पूरा किये बिना दूसरी मंजिलों को पार करना महा कठिन है।

झूंठे विचारों को छोड़ो। सच्चे विचारों में मन लगाओ। यदि तुम में नास्तिकता है अथवा तुम में सार तत्व की जाहिरी समझ नहीं है तो फिर कभी इस ओर रुझान न करो। इससे लाभ ही क्या है? इस विशेषता की दृष्टि से पहले सिद्धान्त

बद्ध हो जाओ। सिद्धान्तों को समझो। जो बात समझ में न आवे उसे अच्छी तरह पूछ लो ताकि हृदय में चोर न रहने पावे। पहले मैदान को साफ कर लो तब उसमें घोड़ा दौड़ाओ ताकि वह कहीं अड़े नहीं और न काँटे कटीलों में उलझे वर्ना बिना समझे बूझे हुए यदि दूसरों की देखा देखी चल खड़े हुये तो उलझन और झगड़े में पड़ जाओगे और आत्मिक उन्नति से हाथ धो बैठोगे। विचारों की व्याख्या पहली शर्त है।

यह विचार[१] क्या है ? हम थोड़ी सी व्याख्या उसकी यहाँ किये देते हैं।

(१) दिल दुखाने (हिंसा) से बचो दिल दही (परहितकामना) या अहिंसा ही को अपने शिष्टाचार की विशेषता बनाओ।

(१) मन वचन, कर्म से अपवित्र न रहो। मन, वचन और कर्म मे पवित्र बनो।

(३) किसी के धन दौलत पर कुदृष्टि न डालो। सचाई और ईमानदारी की कमाई करो।

(४) नाहक और असत्त की ओर से ध्यान हटाओ। हक और सत् को ग्रहण करो।

(५) दुनियाँ की आसक्ति को कम करो। अपने आदर्श के प्रेम को हृदय में स्थान दो।

केवल पाँच बातें हैं। पाँच बातों से अधिक छठी बात कोई

---

(१) यह पाँचों नियम पातंजलि के योग शास्त्र में अन्य ढंग से तथा कुछ भिन्नता से वर्णन किए गए हैं। वहाँ उनके दस रूप नियत किये गए है। हमने केवल पाँच ही को रक्खा है। उसमें उन्हीं के लिऐ यम और नियम का प्रयोग किया गया है हम इनको नकारात्मक और सकारात्मक बताते हैं। दोनों एक ही हैं। यम नकारात्मक है और नियम सकारात्मक है।

भी नहीं है। इन पाँचों में सब कुछ आ जाता है,बल्कि सच तो यों है कि इनमें से केवल पहिली बात को कोई व्यक्ति अच्छी तरह मानकर उस पर चलने लग जाय तो शेष चारों बातें उसमें बिना किसी परिश्रम के स्वय आ जायेंगी और इसी एक में सब कुछ है। मनुष्य जो चाहे वह करे लेकिन किसी का दिल न दुखाये और वह जीवन में देवता बन जायेगा। इसे कर देखो और स्वयं मान जाओगे कि यह अक्षरशः ठीक और सत्य है।

अहिंसा (दिल दुखाने)से बढ़कर कोई पाप नहीं होता और परहित कामना (दिलदही से अधिक अच्छा कोई पुण्य नहीं होता। जो व्यक्ति धर्म या सिद्धान्तबद्ध होकर दूसरे धर्मवालों को बुरा भला कहता रहता है और छेड़छाड़ से उनको सताता है। उसके विषय में यह समझ लो कि वह आत्मिक लाभ से सदा वंचित रहेगा। उसे अत्यन्त कठिनता से मुक्ति प्राप्त होगी। मुक्ति तब ही प्राप्त होगी जब हिंसा का रोग उसके हृदय से चला जायेगा। दुनियावी मजहब वालों का क्या हाल हैं। वह अपने आपको अच्छा और दूसरों को बुरा समझते हैं। महात्माओं के अधिकतर शिष्य देखे जाते हैं जो अपने गुरू की प्रशंसा और दूसरे के गुरू को व्यर्थ और अनावश्यक बुराई करके दुखी करते हैं। यदि तुम्हारा धर्म अच्छा है तो उस पर मन लगाकर चलो। यदि तुम्हारा गुरू सच्चा है तो उसकी सेवा और शान्ति से सम्बन्ध रक्खो। तुमको केवल इतना ही करना है और छेड़छाड से लाभ के बजाय हानि होगी।

हिंसा से बचना सन्त मत के योग साधन की प्रथम विधि की सर्वप्रथम और सबसे अधिक लाजमी शर्त है। इसी नींव

पर अध्यात्म (रूहानियत) की शानदार इमारत खड़ी की जाती है।

इसी एक में शिष्टाचार और सभ्यता की समस्त वस्तुऐं आ जाती हैं राधास्वामी मत नम्रता, शिष्टाचार और सभ्यता का मार्ग है। उद्दण्ता अशिष्टाचार और असभ्यता को उसके मार्ग में गुंजायश नहीं है।

इस वचन में शुभकामना और अशुभ कामना के दोनों ही अंग लिये गये हैं। अशुभ विचारों को मन से ऐसे दूर कर दो कि उसका नाम व निशान तक न रहने पाये। शुभ विचारों को इस मन के बर्तन में कूट-कूट कर भर दो कि किसी अन्य के लिये स्थान न रहे। —:०:—

चौदहवाँ वचन

दिलदही (अहिंसा या परहित कामना) और हिंसा

दिलदुखाना (हिंसा) धुआँ है जो हिंसक के हृदय को संकीर्ण और काला बनाता है। दिलदही (परहित कामना) ही प्रकाश है जो हृदय को प्रकाशित करता है। एक कुरूप है और दूसरा सुन्दर हैं। परहित कामना अत्यन्त सरल काम हैं। हिंसा में फिर भी कठिनाई का सामना करना पड़ता है।

किसी गुरू के दो शिष्य थे। रात को उसने उनको दो-चार पैसे देकर कहा –"बेटा ! मैंने तुम्हें थोड़े से पैसे दिये है. इनसे कोई ऐसी वस्तु खरीद लाओ जिससे यह कमरा भर जाए। उस समय मैं सोचूंगा कि तुम में से कौन मेरी शिक्षा का अधिकारी है।"

दोनों ने सोच-बिचार किया। दो-चार पैसे से क्या होता है। लेकिन दोनी ही उठ खड़े हुए। एक ने पैसों से घास खरीदा और कमरे को भरना चाहा। कमरा लम्बा-चौड़ा था,

घास से नहीं भरा। गुरू ने उस घास को अलग करा दिया।

दूसरा लड़का आया। उसने एक पैसे से चिराग, तेल और बत्ती खरीदी। एक पैसा अपने पास रहने दिया। चिराग को जलाया तो कमरा प्रकाश से भर गया और कोई स्थान ऐसा बाकी नहीं रहा जो उसके प्रकाश से खाली हो। उसने गुरू से कहा "भगवन ! देखिये घर भर गया या नहीं ?"

गुरू बोला--सच है, तुम में बुद्धि और विवेक है और तुझे ही ज्ञान का अधिकार है। मैं केवल तुम्हें उपदेश दूंगा। गुरू ने दूसरे लड़के को बाप के घर भेजा और कहला भेजा कि यह शिक्षा का अधिकारी नहीं है। परहित कामना ही उपासना काण्ड का वह प्रकाश है जो हृदय को प्रकाशित करके उसे हर्ष और नवीनता प्रदान करता है। हिंसा घास फूस है जो हृदय रूपी अपवित्र और कुरूप बना देती है।

—:o:—

पन्द्रहवाँ वचन

हिंसा और दिलदही (परहित कामना अहिंसा) लगातार

कहानी हैं कि हिंसा और दिलदही (परहित कामना) ने किसी समय शरीर धारण किया। दोनों कहने लगीं--"हम में से अधिक सुन्दर कौन है ?" परहित कामना बोली - मैं अधिक सुन्दर हूँ क्योंकि हर एक को अपना रंग देकर अपनी सहानुभूति से अपना जैसा बना लेती हूँ।' हिंसा ने कहा—"यह गलत है। मैं दूसरों का रंग छीनकर अपने आपको सुन्दर और रंगीन बनाती रहती हूँ। तू तो अपना सब कुछ खो बैठती है। तुझमें शक्ति और सुन्दरता कहाँ से आयेगी।" परहित कामना बोली कि एक और एक ग्यारह होते हैं। मैं जिसके यहाँ जाती हूँ वह मुझ सा बन जाता है और दोनों के मिलने से शक्ति और

सुन्दरता का प्राकट्य अपना तेज दिखाने लगता है। हिंसा ने इस बात को नहीं माना। वह व्यर्थ झगड़ा करने लगी। पास ही किसी योगी का झोंपड़ा था। यह राय हुई कि उसके पास चलकर निर्णय कराना चाहिए। दोनों योगी के पास गयीं। उसने अपने झोंपड़े के द्वार पर ये शब्द लिख रक्खे थे — "अहिंसा परमो धर्मः" अर्थात् हिंसा न करना ही सबसे बड़ा धर्म है।

परहित कामना ने हिंसा को दिखाकर कहा कि इन शब्दों को पढ़ लो। यह निर्णय अन्तिम है मगर हिंसा ने नहीं माना दोनों ही योगी के पास गईं और उससे प्रश्न किया। योगी अपने निर्णय का पाबन्द था। वह हिंसा की भी हिंसा नहीं करना चाहता था। उसने सोचा कि अब क्या करूँ जो यह दोनों ही खुश रहें।

उसने परहित कामना से कहा—'बीबी! तुम उस समय बहुत सुन्दर प्रतीत होती हो, जब किसी के हृदय में जाकर वास करती हो।"

उसने हिंसा को उत्तर दिया—"बीबी! तुम उस समय सुन्दर प्रतीत होती हो जब किसी के हृदय में से निकलकर बाहर चली जाती हो।'

दोनों वहाँ से हंसती-खेलती हुई चली गयीं।

—:०:—

सोलहवां वचन

दिलदही (परहित कामना) से अभिप्राय

दिलदही (परहित कामना) से यह अभिप्राय नहीं है कि मनुष्य प्रत्येक मनुष्य के पीछे फिरता हुआ उसको दिल देत

रहे अथवा किसी की चापलूसी करता रहे। इस विशेष स्थान पर उससे यह अभिप्राय है कि उसके हृदय में हर प्राणी के लिये सहानुभूति हो। दिलदही (परहित काममा) हमदर्दी (करूणा) को कहते हैं · जहाँ तक हो सके मन वचन और कर्म से किसी व्यक्ति को बुरा चाहने वाला न बने।

मानवीय शिष्टाचार में इसका होना कहाँ तक सम्भव है और प्रत्येक वस्तु असम्भव भी समझी जा सकती हैं, क्योंकि दुनियां में हर बात की सम्भावना है। मनुष्य अधिकतर व्यवहार के उन आदर्शों को अपनी दृष्टि में रखता है जो जीवन के व्यवहार में अनुभव किये जाते हैं और उन्हीं से सम्बन्ध रखा जाता है।

सारी दुनियाँ की सहानुभूति क्रियात्मक रूप से(अर्थात् तन और धन से) कठिन है लेकिन बुद्ध और विचार से सुगम है। यह प्रत्येक व्यक्ति कर सकता है कि हृदय के पात्र को अहित चिन्तन के विचारों से खाली और हित चिन्तन के विचारों से भर दे। यहाँ अधिकतर प्रयोजन तो इस सिद्धान्त पर जोर देने का यह है कि दुर्भावनाओं को यथा शक्ति मन में आने ही न दिया जाय। अहित चिन्तन असत है और हित चिन्तन सत् है। अहित में निर्बलता है और हित में शक्ति है। जितने अवगुण हैं वह असत् होने के कारण हृदय को निर्बल करते हैं और जितने शुभ गुण हैं वह सत होने के कारण हृदय को शक्तिशाली बना देते हैं। शक्तिवान निर्भय होता है क्योंकि उसका हृदय असन्तुष्टि होता है। यह प्रकृति का माना हुआ सिद्धान्त है।

शिष्टाचार की अन्तिम सीमा निर्भयता है। जगत में बुराई सदा ऐसे आदमियों में प्रगट हुआ करती है जो भय से प्रभा-

वित रहता है और उसी भय के सिलसिले में दूसरों के साथ अन्याय और अत्याचर का क्रम चलता है। निर्भयता की अवस्था उत्पन्न करने का प्रथम उपाय यह है कि मनुष्य जगत की सहानुभूति और हित चिन्तन को मन में स्थान दे। उस समय मत्सर, ईर्ष्या द्वेष आदि सब ही दूर भाग जायेंगे।

बड़ों की दशा देखकर मुदिता छोटों पर दया, बराबर वालों के साथ मैत्री का व्यवहार करना यह ही तीन दशाऐं तो अमली (क्रियात्मक) हो सकती है। रही चौथी दशा, वह यह है कि ऐसे लोग भी आसपास रहते हैं जो व्यर्थ ही द्वेष भाव के कारण शत्रुता करने पर तुले रहते हैं। इनके साथ सदाचारी आदमी को उदासीनता, उपेक्षा और निस्सन्बन्ध भाव से व्यवहार करने का आदेश है। उदासीनता तो सम्भव है लेकिन यह उदासीनता हित चिन्तन से प्रारम्भ हो। यह हितचिन्तन उदासीनता के साथ ही साथ उससे तुमको बचाता रहेगा और वह इससे व्यावहारिक रूप में दूर होता जायेगा। शत्रु की भी शत्रुता को मन में स्थान देना सन्त मत में मना है जैसा कि पन्द्रहवें वचन में परहित कामना (अहिंसा) और हिंसा के विषय में समझाया गया हैं। सन्त मत प्रेम मार्ग है। इसी कारण शब्द योग के सीखने वाले को पहले यह उपाय बताया जा रहा है कि वह किसी तरह साधन और अभ्यास के प्रारम्भिक दर्जे में काम करे। यदि वह इस प्रकार से क्रमशः मन को पवित्र करता हुआ उसमें प्रेम न भरेगा तो वह प्रेम के मार्ग शीघ्रगामी न हो सकेगा और आगे चलकर कल्पनाओं के उधेड़ बुन के पंजे में फंसकर असफल हो जायेगा। पक्षपात और हठधर्मी चाहे वह किसी दर्जे या हैसियत की हो, रुकावट बनकर उसकी राह में काँटा सिद्ध होगी।

—:०:—

(पृष्ठ ४ से आगे)
सत्संग कर जाँय। बात उनकी ही समझ में आयगी। हुजूर महाराज (राय सालिगराम साहब) का कथन है कि १०० वर्ष की पूजा से ।। घड़ी का सत्संग बहतर है। एक व्यक्ति १०० बर्ष की पूजा करके उसी परिणाम पर आया, उसने उसे दूसरे को बता दिया। दूसरे को भी १०० वर्ष की पूजा करके उसी परिणाम पर आना है, इसलिए जिन महापुरुषों ने जो अनुभव करके देख लिया है उसे सुनो और उसे मानो।

हम विषयों के सौदाई बने हैं विषयों के भोग से तृप्ति नहीं होती सन्तान भी है फिर भी स्त्री का सग नहीं छोड़ते। हिर्स नहीं गई। ५०—५५ वर्ष के हो गये मगर हिर्स नहीं जा ी। मेरा जैसा ७६ वर्ष का होने के बाद भी अन्तर के अभ्यास के आनन्द की हविस नहीं छोड़ता। अपनी कमजोरी देखता हूं तो महसूस करता है।

मैंने त्रिकुटी में अभ्यास किया, आनन्द लिया। जब आदमी बूढ़ा हो जाता है तो उसकी इन्द्रियों को शक्ति कमजोर हो जाती है। यदि कामभोग की हिर्स है तो वह पूरी नहीं कर सकता मगर समय आता है जब हिर्स समाप्त हो जाती है, जैसे कि मैं अब कोशिश करता हूं कि सहस्र दल कंवल, त्रिकुटी, सुन्न महासुन्न की अवस्था बने मगर अब नहीं बनती। (देवीचरण को सम्बोधित करते हुये कहा— सुन क्या कह रहा हूं।

मेरा नजर में मोती आया है ।

... ...

भंवर गुफा में सोहं राजै, मुरली अधिक बजाया है ।।

मैं तिल के तिल भीतर चला था। उसका अभ्यास किया। पक्के होते होते त्रिकुटी में आया। मेरा मन पहिले अनेक बार था। फिर वही त्रिकुटी था। मेरा मन ही द्वैत था। मेरा मन ही अद्वैत था। सब खतम हो गये। अब रहा शब्द और प्रकाश। जो वस्तु शब्द और प्रकाश में रहती है और शब्द और प्रकाश की साक्षी है वह कोई

और वस्तु है। अन्तर में हम प्रकाश देख रहे हैं वह देखने वाली और वस्तु है। अन्तर में शब्द हो रहा है। सुनने वाला कोई और है। वह जो अन्य चीज है वह तुम हो, तुम्हारी जात है, तुम्हारा निजस्वरूप है। जब इसका ज्ञान हो गया। फिर क्या है ? मेरा जी चाहे प्रकाश देखूं जी न चाहे न देखूं। जी चाहे सकल्प करूँ, जो न चाहे न करूँ। यह मेरी अपनी दुनियाँ है आपकी नहीं। हम और आप हैं क्या ! जात (नजस्वरूप) हैं कि नहीं ? जब यह ज्ञान हो जाता है तो जितने झगड़े सुख दुखों के हैं, सब खत्म हो जाते हैं। गुरू के पैदा करने वाला मैं हूँ। यह मैं गुस्तागी से नहीं कह रहा। जब यह ज्ञान हो जाता है फिर बन्धन टूट जाते हैं। अभ्यास का बन्धन टूट जाता है। गुरू की, पन्स की गुलामी छूट जाती है। फिर क्या हो जाता है ? जोव निर्द्वंद हो जाता है। चुप हो जाता है। यही जीवन मुक्त दशा है। यह ज्ञान की दृष्टि से है। अमली दृष्टि से मैं समझता हूँ कि मैं चेतन का एक बुलबुला हूँ। वह एक तत्व है आधार है। उसे अनामी पद कहो या अकाल पद कहो। क्या है क्या नहीं कुछ पता नहीं। जब उस अवस्था से उत्थान होता है तब समझता हूँ कि मैं चेतन का बुलबुला हूँ। इसी से पैदा हुआ और इसी में समा जाऊँगा। मगर कोई मानेगा नहीं क्योंकि पहले मैंने स्वयं नहीं माना था। फिर इस अवस्था में तुम कैसे मानोगे वर्ना असलियत यही है।

सुमिरन भजन ध्यान को त्यागो
राम खुदा का बपम तियागो
जैसी गुजरे खुशी से काटो।
जो समझा फकीर कह गाओ।

यह जीवन मुक्त पुरुष का वर्णन है। ये सबके लिये नहीं है हमने बड़े परिश्रम के बाद इस अवस्था को प्राप्त किया है।

वीत राग पुरुष का ध्यान

अब तो मैं यह समझता हूँ कि इसके लिये इलाज यह है कि किसी बीत राग पुरुष को खोपड़ी में रक्खो। जैसे की संगत की जाती है वैसा ही प्रभाव होता रहता है। रेडीयेशन का नियम काम करता है। बीत राग पुरुष वह है जो हर प्रकार के बन्धनों से रहित हो। जिसमें न स्वामीपने का ख्याल हो न सेवकपने का ख्याल हो न राम का ख्याल न भक्ति का। किसी वस्तु में कोई आसक्ति नहीं रखता जो ऐसे पुरुष का ध्यान करपा है उसका यह जन्म भी सफल हो जाता है और अगला जन्म भी सफल हो जायेगा यदि किसी और गुरू से नाम लिया हुआ है ओर वह बीतराग नहीं भी है मगर यदि तुमने उसे बीतराग माना है तो तुम्हारे ख्याल की शक्ति से तुमको यह गति मिल जायेगा जो शायद तुम्हारे गुरू को न मिली हो। मैं यह शब्द तुम्हारे भले के लिये कह रहा हूँ कि अपने-२ गुरुओं को बीतराग मानो। जिस रूप में मानते हो उस रूप में मानो एक स्त्री है। यदि तमने उसे अपनी पत्नी माना है तो उसके ध्यान से काम पैदा होगा। यदि उसे माता माना है तो काम भोग का ख्याल भी पैदा नहीं होगा।

साधन की हर अवस्था का अमल करना कठिन है इसलिये यह सहज नुस्खा है कि अपने गुरू को बीतराग पुरुष मानो। जैसी आसा वैसो वासा। यदि उसे विश्वास से पूर्ण माना है तो तुमको लोक परलोक दोनों मिल जायेंगे। मुझे तो मिला औरों का पता नहीं यदि फकीरचन्द की देह को गुरू समझते रहोगे तो तुम्हारा बेड़ा पार न होगा।

—:०:०—

R. S.

शब्द

(रचियता–स्व० हजूर दीवान चन्द्र जी आहूजा)

इन्सान की शकल मिली हमको, इन्सान हमें बनना होगा।
हम काम करें इन्सानों के हैवानों से हटना होगा ॥
जो औरों की खिदमत करते, इन्सान वही कहलाते है।
जो दुःख सहकर सुख देते हैं, प्रधान वही कहलाते हैं ॥
जो खुदगर्जी में पड़ करके, औरों को दुःख पहुचाते हैं।
वो छोटे और कमीने हैं, शैतान वही कहलाते हैं ॥
जो अपनी रूह को जान गया, वह सबको अपना मान गया।
इस दुनियां में वह सुखी रहा और कर अपना कल्याण गया ॥
किसी मुर्शिद कामिल से मिलकर पूछो जो राज इन्सानी है
वह उनका पता बता देगा, जो फानी और लाफानी है ॥
गर खुदा को मिलना चाहते हो, इन्सान बनो, इन्सान बनो।
अशरफ, अफजल उनमत्त होकर नादानो ! ना नादान बनो।
कामिल इन्सान की शोहरत से, कामिल की पहचान करो।
वन्दे में गुदा को दिखलाकर, 'गाफिल' दुनियाँ हैरान करो।

—:०:—

"मनुष्य बनो" (हिन्दी मासिक पत्र) समाचार पत्र (केन्द्रीय) अधिनियम १९५६ नियम ८ फार्म ४ के अनुसार अपेक्षित आवश्यक सूचना

१—प्रकाशन का स्थान	:	अलीगढ़
२—प्रकाशन अवधि	:	मासिक
३—मुद्रक का नाम	:	श्रीमती सुधा मीतल
क—राष्ट्रीयता	:	भारतीय
ख—पता	:	शिव भवन, लेखराज नगर, अलीगढ़।
४—प्रकाशक का नाम	:	श्रीमती सुधा मीतल
राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	:	शिव भवन, लेखराज नगर, अलीगढ़ ।
५—सम्पादक का नाम	:	श्रीमती सुधा मीतल
राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	:	शिव भवन, लेखराज नगर, अलीगढ़ ।
६—स्वत्वाधिकारी	:	श्रीमती सुधा मीतल
संरक्षक	:	परमदयाल फकीरचन्द्र जी महाराज

७—मैं सुधा मीतल घोषित करती हूं कि उपर्युक्त विवरण मेरी जानकारी और विवरण के अनुसार सही है ।

दिनांक १५ नव०, १९८८

सुधा मित्तल

प्रकाशक के हस्ताक्षर

Regd. NO L—ALG.28

मिलने का पता :—
'मनुष्य बनो' कार्यालय
शिव भवन, लेखराज नगर
अलीगढ़—२०२००१ (उ० प्र०

अवैतनिक सहायक सम्पादक
महेशचन्द्र मीतल
सम्पादक, व्यवस्थापक व प्रकाशक
श्रीमती सुधा मीतल

ग्राहक संख्या— 170

श्रीमान Sri Chilwar Narsimhlu
Book Seller
V&PO Ramswada
Nizamabad- AP

मुद्रक : श्रीमती सुधा मीतल, दातादयाल प्रिंटर्स, लेखराज नगर, अलीगढ़।